भारतीय बहुभाषिक समाज में हिंदी की संपर्क भाषा के रूप में उपयोगिता

डॉ. अरविन्द सिंह तेजावत*

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेंद्रगढ़, हरियाणा, भारत

office.tejawat@gmail.com

शोध सार: भारत विश्व के सर्वाधिक बहुभाषिक राष्ट्रों में से एक है, जहाँ 121 भाषाएँ तथा 270 से अधिक मातृभाषाएँ प्रचलन में हैं। ऐसे परिवेश में अंतर-क्षेत्रीय संप्रेषण के लिए किसी संपर्क भाषा की आवश्यकता अपरिहार्य हो जाती है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य यह परीक्षण करना है कि हिंदी इस भूमिका का निर्वाह किस सीमा तक और किन कारणों से कर पा रही है। अध्ययन में संपर्क भाषा की सैद्धांतिक अवधारणा का विवेचन करते हुए हिंदी की व्यापकता के भौगोलिक, जनसांख्यिकीय, आर्थिक एवं सांस्कृतिक आधारों का विश्लेषण किया गया है। जनगणना 2011 के भाषिक आँकड़ों के आलोक में यह दर्शाया गया है कि हिंदी न केवल सर्वाधिक मातृभाषियों वाली भाषा है, अपितु द्वितीय एवं तृतीय भाषा के रूप में भी उसका प्रसार सर्वाधिक है। अध्ययन में यह भी रेखांकित किया गया है कि हिंदी की संपर्क-भूमिका मुख्यतः अनौपचारिक, स्वतःस्फूर्त एवं बाज़ार-प्रेरित रही है, न कि राज्य-प्रायोजित। चलचित्र, दूरदर्शन, आंतरिक श्रमिक प्रवसन, सेना, रेलवे तथा तीर्थाटन—इन कारकों ने हिंदी को शासकीय प्रयासों की अपेक्षा कहीं अधिक प्रभावी ढंग से प्रसारित किया है। साथ ही अध्ययन उन सीमाओं का भी निष्पक्ष विवेचन करता है जो तमिलनाडु जैसे क्षेत्रों में तथा उच्च-प्रतिष्ठा के प्रकार्यात्मक क्षेत्रों में हिंदी के समक्ष विद्यमान हैं। निष्कर्षतः यह प्रतिपादित किया गया है कि हिंदी की उपयोगिता तभी टिकाऊ रहेगी जब वह आरोपित न होकर स्वैच्छिक बनी रहे।

मुख्य शब्द: संपर्क भाषा, बहुभाषिकता, जनगणना 2011, भाषा-प्रसार, कोड-मिश्रण, बाज़ारू हिंदी, आंतरिक प्रवसन, त्रिभाषा सूत्र, भाषिक अस्मिता।

1. प्रस्तावना

बहुभाषिक समाजों में संप्रेषण की समस्या का समाधान प्रायः दो प्रकार से होता है—या तो सभी नागरिक परस्पर की भाषाएँ सीखें, जो व्यावहारिक रूप से असंभव है, या फिर कोई एक भाषा सामान्य माध्यम के रूप में स्वीकृत हो जाए। द्वितीय विकल्प को भाषाविज्ञान में "संपर्क भाषा" अथवा "लिंग्वा फ्रांका" कहा जाता है। भारत में यह भूमिका ऐतिहासिक रूप से भिन्न-भिन्न कालों में भिन्न-भिन्न भाषाओं ने निभाई है—प्राचीन काल में संस्कृत एवं प्राकृत ने, मध्यकाल में फ़ारसी एवं हिंदवी ने, औपनिवेशिक काल में अंग्रेज़ी ने, और स्वातंत्र्योत्तर काल में मुख्यतः हिंदी एवं अंग्रेज़ी ने संयुक्त रूप से [3], [7], [12]।

प्रस्तुत अध्ययन का केंद्रीय प्रश्न यह है कि समकालीन भारत में हिंदी की संपर्क-भूमिका की वास्तविक सीमा क्या है, वह किन कारकों से पुष्ट होती है और किन कारकों से बाधित। यह प्रश्न इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि इस विषय पर सार्वजनिक विमर्श प्रायः दो अतियों में विभाजित रहा है—एक ओर हिंदी को स्वतःसिद्ध राष्ट्रीय माध्यम मानने वाला भावुक आग्रह, दूसरी ओर उसे आधिपत्य का उपकरण मानने

वाला तीव्र प्रतिरोध। अध्ययन इन दोनों अतियों से हटकर आनुभविक आँकड़ों एवं समाजभाषावैज्ञानिक विश्लेषण के आधार पर संतुलित निष्कर्ष तक पहुँचने का प्रयास करता है। पद्धति की दृष्टि से यह अध्ययन विश्लेषणात्मक है तथा जनगणना-आँकड़ों, सर्वेक्षण-प्रतिवेदनों एवं द्वितीयक साहित्य पर आधारित है।

2. भारत की बहुभाषिक संरचना

भारत की भाषिक विविधता को समझे बिना संपर्क भाषा के प्रश्न पर विचार नहीं किया जा सकता। जनगणना 2011 के भाषा-संबंधी आँकड़ों के अनुसार देश में 121 भाषाएँ ऐसी हैं जिनके बोलने वालों की संख्या दस सहस्र से अधिक है; इनमें से 22 संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित हैं और शेष 99 अनुसूची से बाहर हैं। मातृभाषाओं की कुल संख्या 270 से अधिक है, जबकि विभिन्न भाषिक सर्वेक्षणों ने 700 से अधिक भाषिक रूपों की पहचान की है [1], [12], [14]।

सारणी 1: भारत की भाषिक संरचना का संक्षिप्त चित्र (जनगणना 2011 के आधार पर)

श्रेणी	संख्या/अनुपात	टिप्पणी
अनुसूचित भाषाएँ	22	कुल जनसंख्या का लगभग 96.7 प्रतिशत
गैर-अनुसूचित भाषाएँ	99	कुल जनसंख्या का लगभग 3.3 प्रतिशत
हिंदी (मातृभाषा-समूह)	लगभग 43.6 प्रतिशत	बोलियों सहित व्यापक परिभाषा
द्विभाषी जनसंख्या	लगभग 26 प्रतिशत	एक से अधिक भाषा जानने वाले
त्रिभाषी जनसंख्या	लगभग 7 प्रतिशत	तीन भाषाएँ जानने वाले
अंग्रेज़ी (किसी भी क्रम में)	लगभग 10–12 प्रतिशत	मुख्यतः द्वितीय/तृतीय भाषा के रूप में

इन आँकड़ों से दो महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकलते हैं। प्रथम, भारत में एकभाषिकता अपवाद नहीं, अपितु बहुभाषिकता सामान्य स्थिति है—लगभग एक-तिहाई जनसंख्या एक से अधिक भाषा का प्रयोग करती है, और नगरीय क्षेत्रों में यह अनुपात और भी अधिक है। द्वितीय, हिंदी अकेली ऐसी भाषा है जिसे लगभग आधी जनसंख्या प्रथम, द्वितीय अथवा तृतीय भाषा के रूप में जानती है—यही तथ्य उसकी संपर्क-भूमिका का संख्यात्मक आधार है [1], [12]।

3. संपर्क भाषा की सैद्धांतिक अवधारणा

समाजभाषाविज्ञान में संपर्क भाषा उस भाषा को कहते हैं जो भिन्न-भिन्न मातृभाषा वाले समुदायों के बीच संप्रेषण का साधन बनती है। जोशुआ फ़िशमैन ने भाषा के प्रकार्यात्मक विभाजन की चर्चा करते हुए इसे "व्यापक संप्रेषण की भाषा" (language of wider communication) कहा है [4]। चार्ल्स फ़र्ग्यूसन की द्विस्तरीयता (diglossia) की संकल्पना यह स्पष्ट करती है कि एक ही समाज में भिन्न-भिन्न प्रकार्यों के लिए भिन्न-भिन्न भाषा-रूप प्रयुक्त होते हैं—उच्च प्रकार्यों के लिए एक, निम्न एवं अनौपचारिक प्रकार्यों के लिए दूसरा [5]।

यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि संपर्क भाषा, राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा—ये तीनों पृथक् अवधारणाएँ हैं। राजभाषा विधिक निर्णय से बनती है, राष्ट्रभाषा भावात्मक स्वीकृति से, जबकि संपर्क भाषा व्यावहारिक आवश्यकता से स्वतः विकसित होती है। संपर्क भाषा की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वह किसी घोषणा से नहीं, अपितु प्रयोग से बनती है। यही कारण है कि हिंदी की संपर्क-भूमिका उसकी राजभाषा-स्थिति से स्वतंत्र है और अनेक क्षेत्रों में शासकीय प्रयासों से कहीं आगे बढ़ चुकी है [3], [4], [11]।

4. भारत में संपर्क भाषा की ऐतिहासिक परंपरा

हिंदी की वर्तमान भूमिका को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में रखे बिना उसका समुचित मूल्यांकन संभव नहीं। भारत में संपर्क भाषा की परंपरा अत्यंत प्राचीन है और उसका एक महत्वपूर्ण लक्षण यह रहा है कि यह भूमिका कभी स्थायी रूप से किसी एक भाषा के पास नहीं रही। प्राचीन काल में संस्कृत शास्त्रीय एवं धार्मिक विमर्श की अखिल भारतीय भाषा थी, किंतु जनसामान्य के व्यवहार में प्राकृतें प्रचलित थीं। सम्राट अशोक के अभिलेख इस तथ्य के प्रमाण हैं कि शासन ने जनसंप्रेषण के लिए क्षेत्रीय प्राकृतों को ही चुना, न कि संस्कृत को [7], [9]।

मध्यकाल में फ़ारसी ने प्रशासनिक संपर्क भाषा का स्थान लिया, यद्यपि उसका प्रयोग मुख्यतः दरबारी एवं राजस्व-संबंधी क्षेत्रों तक सीमित रहा। इसी अवधि में एक जन-स्तरीय संपर्क भाषा भी विकसित हुई, जिसे विभिन्न कालों में हिंदवी, देहलवी, रेख़्ता, दक्खिनी अथवा हिंदुस्तानी कहा गया। अमीर ख़ुसरो की रचनाएँ तथा दक्खिनी साहित्य इस बात के साक्ष्य हैं कि यह भाषा उत्तर से दक्षिण तक व्यापक रूप से समझी जाती थी। यह उल्लेखनीय है कि दक्खिनी का विकास सैन्य एवं प्रशासनिक प्रवसन के माध्यम से हुआ—अर्थात् वही प्रक्रिया जो आज भी हिंदी के प्रसार में सक्रिय है [7], [9], [15]।

औपनिवेशिक काल में अंग्रेज़ी ने उच्च प्रशासन, न्याय एवं शिक्षा के क्षेत्र में संपर्क भाषा का स्थान लिया और शिक्षित वर्ग की अखिल भारतीय भाषा बन गई। स्वतंत्रता-आंदोलन के दौरान हिंदुस्तानी को जन-संपर्क की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने का सचेत प्रयास हुआ, किंतु विभाजन के पश्चात यह संकल्पना राजनीतिक रूप से अव्यावहारिक हो गई [2], [6], [10]।

सारणी 2: भारत में संपर्क भाषा की ऐतिहासिक क्रमिकता

कालखंड	प्रमुख संपर्क भाषा	प्रकार्य-क्षेत्र	प्रसार का माध्यम
प्राचीन काल	संस्कृत एवं प्राकृतें	शास्त्र, धर्म, जनव्यवहार	शिक्षा-परंपरा, बौद्ध-जैन प्रचार
मध्यकाल (प्रशासन)	फ़ारसी	दरबार, राजस्व, अभिलेख	राजकीय संरक्षण
मध्यकाल (जनस्तर)	हिंदवी/रेख़्ता/दक्खिनी	बाज़ार, सेना, संत-काव्य	व्यापार एवं सैन्य प्रवसन
औपनिवेशिक काल	अंग्रेज़ी	प्रशासन, न्याय, उच्च शिक्षा	शिक्षा-नीति एवं राजकीय सेवा
स्वातंत्र्योत्तर काल	हिंदी एवं अंग्रेज़ी (द्वि-व्यवस्था)	हिंदी—जनस्तर; अंग्रेज़ी—उच्च प्रकार्य	संचार-माध्यम, प्रवसन, शिक्षा

इस ऐतिहासिक क्रमिकता से एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकलता है: भारत में संपर्क भाषा सदैव प्रकार्य-विभाजित रही है। किसी एक भाषा ने कभी समस्त प्रकार्यों को एक साथ नहीं सँभाला। वर्तमान की हिंदी-अंग्रेज़ी द्वि-व्यवस्था इसी दीर्घकालिक प्रवृत्ति का समकालीन रूप है, विचलन नहीं [3], [11], [12]।

5. हिंदी की संपर्क-भूमिका के आधार

हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने वाले कारकों को निम्नलिखित वर्गों में रखा जा सकता है।

5.1 भौगोलिक एवं जनसांख्यिकीय आधार

हिंदी-भाषी क्षेत्र एक सतत भौगोलिक पट्टी के रूप में विस्तृत है, जो राजस्थान से बिहार तक और हिमाचल से मध्य प्रदेश तक फैला है। यह पट्टी भारत के भौगोलिक केंद्र में स्थित है, जिससे पूर्व-पश्चिम एवं उत्तर-दक्षिण के आवागमन में हिंदी क्षेत्र से गुज़रना प्रायः अनिवार्य हो जाता है। इसके अतिरिक्त हिंदी सर्वाधिक जनसंख्या वाले राज्यों—उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश एवं राजस्थान—की प्रमुख भाषा है, जिससे उसका संख्यात्मक भार स्वाभाविक रूप से अधिक है [1], [9]।

5.2 आर्थिक एवं प्रवसनजन्य आधार

संपर्क भाषा के प्रसार में आंतरिक प्रवसन की भूमिका निर्णायक होती है। हिंदी पट्टी से बड़ी संख्या में श्रमिक महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, कर्नाटक एवं केरल की ओर जाते हैं। ये प्रवासी अपने साथ हिंदी को ले जाते हैं और स्थानीय बाज़ारों में एक सरलीकृत, व्याकरण-शिथिल हिंदी विकसित होती है, जिसे प्रायः "बाज़ारू हिंदी" कहा जाता है। मुंबई में विकसित "बंबइया हिंदी" इसका सर्वाधिक अध्ययित उदाहरण है, जिसमें मराठी, गुजराती एवं अंग्रेज़ी के तत्व घुल-मिल गए हैं [8], [9], [13]।

5.3 सांस्कृतिक एवं संचार-माध्यमीय आधार

हिंदी के प्रसार में चलचित्र-उद्योग का योगदान संभवतः किसी भी शासकीय संस्था से अधिक रहा है। हिंदी सिनेमा ने न केवल शब्दावली एवं मुहावरे को अखिल भारतीय स्वरूप दिया, अपितु एक ऐसी सरल एवं मिश्रित हिंदी को लोकप्रिय बनाया जो शुद्धतावादी मानक से भिन्न किंतु अधिक ग्राह्य थी। इसी प्रकार दूरदर्शन के धारावाहिकों, हिंदी फ़िल्मी संगीत, क्रिकेट-कमेंट्री तथा हाल के दशकों में डिजिटल मंचों की सामग्री ने हिंदी की श्रवण-परिचितता को अहिंदीभाषी क्षेत्रों में भी व्यापक बनाया [8], [13]।

5.4 संस्थागत आधार

कतिपय अखिल भारतीय संस्थाओं ने भी अनजाने ही हिंदी के प्रसार में योगदान दिया है। सशस्त्र सेनाओं में विभिन्न प्रांतों के सैनिकों के बीच संप्रेषण की भाषा प्रायः हिंदी रही है। रेलवे, बैंकिंग, डाक-सेवा तथा अर्धसैनिक बलों में स्थानांतरण-आधारित सेवा-व्यवस्था ने कर्मचारियों के लिए हिंदी को व्यावहारिक आवश्यकता बनाया। तीर्थाटन भी एक महत्वपूर्ण किंतु प्रायः उपेक्षित कारक है—काशी, हरिद्वार, मथुरा, प्रयागराज एवं अयोध्या जैसे तीर्थस्थलों पर देशभर से आने वाले यात्रियों के बीच हिंदी ही सामान्य माध्यम बनती है [3], [7], [12]।

सारणी 3: हिंदी की संपर्क-भूमिका का क्षेत्रवार आकलन

क्षेत्र	हिंदी की स्थिति	प्रमुख प्रतिस्पर्धी माध्यम	प्रवृत्ति
हिंदी पट्टी	प्रथम भाषा एवं पूर्ण प्रकार्यात्मक माध्यम	अंग्रेज़ी (उच्च प्रकार्यों में)	स्थिर
पश्चिम भारत	व्यापक द्वितीय भाषा, बाज़ार-माध्यम	मराठी, गुजराती, अंग्रेज़ी	सुदृढ़
पूर्वोत्तर भारत	अंतर-जनजातीय संपर्क में उपयोगी	असमिया, नागामीज़, अंग्रेज़ी	क्रमशः बढ़ती हुई
पूर्वी भारत	व्यापार एवं प्रवसन के माध्यम से प्रचलित	बांग्ला, ओड़िया, अंग्रेज़ी	मध्यम
दक्षिण भारत (सामान्यतः)	नगरीय एवं सेवा-क्षेत्रों में सीमित प्रयोग	अंग्रेज़ी, क्षेत्रीय भाषाएँ	मिश्रित
तमिलनाडु	सर्वाधिक सीमित; ऐतिहासिक प्रतिरोध	तमिल, अंग्रेज़ी	न्यून

सारणी से यह स्पष्ट है कि हिंदी की संपर्क-उपयोगिता एकरूप नहीं, अपितु क्षेत्र-सापेक्ष है। पूर्वोत्तर में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जहाँ अत्यधिक भाषिक विविधता के कारण किसी तटस्थ माध्यम की आवश्यकता प्रबल है और हिंदी ने वहाँ अपेक्षाकृत कम प्रतिरोध के साथ स्थान बनाया है [9], [12], [15]।

6. संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का भाषिक स्वरूप

यह ध्यान देने योग्य है कि संपर्क भाषा के रूप में प्रयुक्त हिंदी और मानक साहित्यिक हिंदी—ये दोनों एक नहीं हैं। संपर्क-प्रयोग में जो हिंदी विकसित हुई है, उसकी कुछ विशिष्ट प्रवृत्तियाँ हैं:

- व्याकरणिक सरलीकरण: लिंग-अन्विति की शिथिलता तथा जटिल क्रिया-रूपों का परिहार सामान्य है।
- शब्दावली की मिश्रता: अंग्रेज़ी एवं स्थानीय भाषा के शब्दों का मुक्त समावेश, यथा "स्टेशन", "टिकट", "ऑफ़िस", "बिल"।
- कोड-मिश्रण एवं कोड-परिवर्तन: एक ही वाक्य में दो भाषाओं का प्रयोग, जो अशिक्षा का नहीं अपितु द्विभाषिक दक्षता का लक्षण है।
- तत्सम शब्दावली का परिहार: शासकीय हिंदी की क्लिष्ट पदावली संपर्क-प्रयोग में प्रायः अनुपस्थित रहती है।
- क्षेत्रीय उच्चारण-भेद: दक्खिनी, बंबइया एवं पूर्वोत्तरी हिंदी के अपने विशिष्ट ध्वन्यात्मक स्वरूप विकसित हो चुके हैं।

इन प्रवृत्तियों को प्रायः "हिंदी का बिगड़ना" कहकर आलोचित किया जाता है, किंतु समाजभाषावैज्ञानिक दृष्टि से यह मूल्यांकन त्रुटिपूर्ण है। संपर्क भाषा की सफलता का मानदंड शुद्धता नहीं, अपितु सुगम्यता है। ऐतिहासिक रूप से जिन भाषाओं ने व्यापक संपर्क-भूमिका निभाई, उन सभी ने सरलीकरण की यह प्रक्रिया अपनाई [4], [5], [8]।

सारणी 4: मानक हिंदी एवं संपर्क-प्रयुक्त हिंदी का तुलनात्मक स्वरूप

तुलना-बिंदु	मानक साहित्यिक हिंदी	संपर्क-प्रयुक्त हिंदी
शब्दावली का स्रोत	तत्सम एवं संस्कृतनिष्ठ पदावली की प्रधानता	तद्भव, देशज एवं अंग्रेज़ी-मिश्रित शब्दावली
लिंग-अन्विति	कठोरता से अनुपालित	प्रायः शिथिल अथवा उपेक्षित
क्रिया-रूप	पूर्ण काल-पक्ष-वृत्ति व्यवस्था	सीमित एवं सरलीकृत रूपों का प्रयोग
कोड-मिश्रण	परिहार्य माना जाता है	सामान्य एवं स्वीकार्य
प्रयोग-क्षेत्र	साहित्य, शिक्षा, शासकीय पत्राचार	बाज़ार, कार्यस्थल, यात्रा, मनोरंजन

तुलना-बिंदु	मानक साहित्यिक हिंदी	संपर्क-प्रयुक्त हिंदी
मानकीकरण	व्याकरण एवं कोश द्वारा नियंत्रित	प्रयोग द्वारा स्वतः नियंत्रित

उपर्युक्त तुलना से यह स्पष्ट होता है कि दोनों रूपों के प्रकार्य भिन्न हैं और इसीलिए उनके मूल्यांकन के मानदंड भी भिन्न होने चाहिए। मानक हिंदी की कसौटी शुद्धता एवं संगति है, जबकि संपर्क-हिंदी की कसौटी बोधगम्यता एवं कार्यसाधकता। इन दोनों रूपों के बीच एक स्वस्थ अंतःक्रिया आवश्यक है—यदि मानक रूप संपर्क-रूप से पूर्णतः कट जाए तो वह कृत्रिम हो जाता है, और यदि संपर्क-रूप पर कोई मानक-दबाव न रहे तो अंतर-क्षेत्रीय पारस्परिक बोधगम्यता क्षीण होने लगती है [5], [8], [15]।

7. शैक्षिक आयाम: त्रिभाषा सूत्र एवं संपर्क-दक्षता

संपर्क भाषा के विकास में शिक्षा-व्यवस्था की भूमिका निर्णायक होती है, क्योंकि विद्यालयी शिक्षा ही वह तंत्र है जो अनौपचारिक भाषिक परिचय को व्यवस्थित दक्षता में परिवर्तित करती है। भारत में इस उद्देश्य से त्रिभाषा सूत्र को अपनाया गया, जिसे कोठारी आयोग (1964–66) की संस्तुतियों के आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 में औपचारिक स्वरूप प्राप्त हुआ। इसके अनुसार अहिंदीभाषी राज्यों में क्षेत्रीय भाषा, हिंदी एवं अंग्रेज़ी तथा हिंदीभाषी राज्यों में हिंदी, अंग्रेज़ी एवं एक आधुनिक भारतीय भाषा—अधिमानतः दक्षिण भारत की—पढ़ाई जानी थी [3], [12], [14]।

व्यवहार में इस सूत्र का क्रियान्वयन गंभीर रूप से असममित रहा। अहिंदीभाषी राज्यों में हिंदी का शिक्षण प्रायः यथावत् चला, किंतु हिंदीभाषी राज्यों में तीसरी भाषा के रूप में दक्षिण भारतीय भाषाओं के स्थान पर प्रायः संस्कृत को चुना गया, जिसके पीछे शैक्षिक सुविधा एवं शिक्षक-उपलब्धता के व्यावहारिक कारण थे। परिणामस्वरूप सूत्र का मूल उद्देश्य—अंतर-क्षेत्रीय भाषिक सेतु का द्विपक्षीय निर्माण—अधूरा रह गया और अहिंदीभाषी क्षेत्रों में यह धारणा दृढ़ हुई कि भाषा-सीखने का भार एकपक्षीय है [6], [10], [14]।

यह असंतुलन हिंदी की संपर्क-उपयोगिता के लिए दीर्घकाल में हानिकारक सिद्ध हुआ, क्योंकि इसने भाषा-अधिगम को स्वैच्छिक सहयोग के स्थान पर राजनीतिक विवाद का विषय बना दिया। समाजभाषावैज्ञानिक शोध यह दर्शाते हैं कि जिस भाषा को सीखना पारस्परिक आदान-प्रदान के रूप में अनुभव होता है, उसका प्रसार स्थायी होता है; इसके विपरीत जिसे एकपक्षीय अपेक्षा के रूप में अनुभव किया जाता है, उसके प्रति प्रतिरोध विकसित होता है [4], [10], [11]।

एक अन्य शैक्षिक पक्ष यह है कि विद्यालयों में पढ़ाई जाने वाली हिंदी और संपर्क-व्यवहार में प्रयुक्त हिंदी के बीच पर्याप्त अंतर है। पाठ्यपुस्तकों की हिंदी प्रायः साहित्यिक एवं तत्सम-बहुल होती है, जबकि वास्तविक संप्रेषण के लिए सरल, कार्यात्मक शब्दावली अपेक्षित है। इस विसंगति के कारण अनेक विद्यार्थी वर्षों हिंदी पढ़ने के बाद भी व्यावहारिक संप्रेषण में असहज रहते हैं। संपर्क-प्रयोजन के लिए पृथक् पाठ्यक्रम-अभिकल्प इस समस्या का व्यावहारिक समाधान हो सकता है [5], [8], [15]।

8. प्रतिरोध एवं व्यावहारिक सीमाएँ

हिंदी की संपर्क-उपयोगिता के समक्ष कतिपय वास्तविक सीमाएँ भी हैं, जिनका निष्पक्ष उल्लेख आवश्यक है। सर्वप्रथम, दक्षिण भारत—विशेषतः तमिलनाडु—में हिंदी के प्रति ऐतिहासिक प्रतिरोध विद्यमान है, जिसकी जड़ें 1937 एवं 1965 के आंदोलनों में हैं। यह प्रतिरोध हिंदी भाषा के विरुद्ध उतना नहीं, जितना उसके आरोपण की आशंका के विरुद्ध है [2], [6], [10]।

द्वितीय, उच्च-प्रतिष्ठा वाले प्रकार्यात्मक क्षेत्रों—उच्च शिक्षा, विधि, चिकित्सा, प्रौद्योगिकी एवं कॉर्पोरेट व्यवसाय—में अंग्रेज़ी की प्रधानता यथावत् है। हिंदी इन क्षेत्रों में संपर्क भाषा के रूप में स्थान नहीं बना पाई, जिससे उसकी भूमिका मुख्यतः अनौपचारिक एवं निम्न-प्रकार्यात्मक स्तर तक सीमित रह गई। तृतीय, त्रिभाषा सूत्र का असममित क्रियान्वयन भी एक कारण है—अहिंदीभाषी राज्यों ने हिंदी पढ़ाई, किंतु हिंदीभाषी राज्यों ने प्रायः किसी दक्षिण भारतीय भाषा को नहीं अपनाया, जिससे पारस्परिकता का अभाव उत्पन्न हुआ और भाषा-नीति की विश्वसनीयता क्षीण हुई [2], [6], [10], [14]।

चतुर्थ, हिंदी की आंतरिक विविधता भी एक व्यावहारिक सीमा है। भोजपुरी, मैथिली, राजस्थानी एवं छत्तीसगढ़ी के वक्ताओं में अपनी पृथक् भाषिक अस्मिता की चेतना बढ़ी है, जिससे "हिंदी" की संख्यात्मक श्रेष्ठता का आधार स्वयं प्रश्नांकित हुआ है [1], [9], [15]।

9. सुझाव

- हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में स्वैच्छिक आधार पर प्रोत्साहित किया जाए; किसी भी प्रकार का आरोपणात्मक स्वर प्रतिकूल परिणाम ही देगा।
- पारस्परिकता के सिद्धांत पर बल दिया जाए—हिंदीभाषी क्षेत्रों में दक्षिण भारतीय एवं पूर्वोत्तरी भाषाओं के शिक्षण को वास्तविक रूप से लागू किया जाए।
- संपर्क-प्रयोजन के लिए सरल, व्यावहारिक हिंदी की पाठ्य-सामग्री तैयार की जाए, न कि क्लिष्ट साहित्यिक हिंदी की।

- अनुवाद-प्रौद्योगिकी एवं बहुभाषिक डिजिटल मंचों में निवेश बढ़ाया जाए, जिससे संपर्क का भार किसी एक भाषा पर न पड़े।
- हिंदी की बोलियों को प्रतिद्वंद्वी नहीं, अपितु सहयोगी मानते हुए उनके संरक्षण की नीति अपनाई जाए।

10. अध्ययन की सीमाएँ एवं भावी अनुसंधान-दिशाएँ

प्रस्तुत अध्ययन की कतिपय पद्धतिगत सीमाएँ स्पष्ट रूप से स्वीकार की जानी चाहिए। प्रथम, यह अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों एवं जनगणना-आँकड़ों पर आधारित है; इसमें कोई मौलिक क्षेत्र-सर्वेक्षण सम्मिलित नहीं है। द्वितीय, जनगणना में भाषा-संबंधी आँकड़े स्व-घोषणा पर आधारित होते हैं, अतः वे वास्तविक भाषिक दक्षता के स्थान पर भाषिक अस्मिता की घोषणा को अधिक प्रतिबिंबित करते हैं—कोई व्यक्ति जो व्यवहार में भोजपुरी बोलता है, वह अपनी मातृभाषा हिंदी लिखा सकता है, और इसके विपरीत भी संभव है [1], [15]।

तृतीय, "हिंदी जानना" एक अत्यंत विस्तृत श्रेणी है, जिसमें सामान्य श्रवण-बोध से लेकर पूर्ण लेखन-दक्षता तक की भिन्न-भिन्न अवस्थाएँ सम्मिलित हो जाती हैं। इस श्रेणी के भीतर स्तर-भेद किए बिना संपर्क-उपयोगिता का सटीक आकलन कठिन है।

इन सीमाओं को देखते हुए भावी अनुसंधान की कुछ दिशाएँ सुझाई जा सकती हैं। सर्वप्रथम, विभिन्न महानगरों में दक्षता-स्तर-आधारित क्षेत्र-सर्वेक्षण अपेक्षित हैं, जो घोषित नहीं अपितु प्रदर्शित भाषिक क्षमता को मापें। द्वितीय, कार्यस्थलों पर वास्तविक भाषा-प्रयोग के अभिलेखन पर आधारित संभाषण-विश्लेषण उपयोगी होगा। तृतीय, डिजिटल मंचों पर हिंदी के प्रयोग—विशेषतः रोमन लिपि में लिखी जाने वाली हिंदी—का संगणकीय विश्लेषण एक अत्यंत संभावनाशील किंतु अल्प-अन्वेषित क्षेत्र है। चतुर्थ, पूर्वोत्तर भारत में हिंदी के प्रसार की प्रक्रिया पर केंद्रित अध्ययन विशेष रूप से अपेक्षित हैं, क्योंकि वहाँ की स्थिति शेष भारत से गुणात्मक रूप से भिन्न है [9], [12], [13]।

11. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि हिंदी भारत की सर्वाधिक व्यापक संपर्क भाषा है, किंतु एकमात्र नहीं। उसकी यह भूमिका मुख्यतः स्वतःस्फूर्त, बाज़ार-प्रेरित एवं सांस्कृतिक कारकों से पुष्ट हुई है—शासकीय आदेशों से नहीं। यही उसकी सबसे बड़ी शक्ति भी है और यही उसकी सीमा का संकेतक भी, क्योंकि जहाँ-जहाँ हिंदी को नीतिगत रूप से आरोपित करने का प्रयास हुआ, वहाँ प्रतिरोध ही बढ़ा।

व्यावहारिक दृष्टि से भारत में आज एक द्वि-संपर्क व्यवस्था कार्यरत है—अनौपचारिक, जन-स्तरीय संप्रेषण के लिए हिंदी और औपचारिक, उच्च-प्रकार्यात्मक क्षेत्रों के लिए अंग्रेज़ी। यह व्यवस्था आदर्श भले न हो, किंतु यह भारत की बहुभाषिक वास्तविकता के अनुरूप है। हिंदी की उपयोगिता का भविष्य इस बात पर निर्भर करेगा कि वह अन्य भारतीय भाषाओं के समक्ष प्रतिद्वंद्वी के रूप में प्रस्तुत होती है या सहचरी के रूप में। यदि हिंदी अपनी सरलता, समावेशिता एवं ग्रहणशीलता बनाए रखती है, तो उसकी संपर्क-भूमिका स्वाभाविक रूप से सुदृढ़ होती रहेगी; और यदि वह शुद्धतावाद अथवा आधिपत्य की ओर उन्मुख होती है, तो यह भूमिका क्षीण होगी।

संदर्भ सूची

1. भारत सरकार (2011). *जनगणना 2011: भाषा संबंधी सारणियाँ (सी-16 एवं सी-17).* नई दिल्ली: भारत के महापंजीयक एवं जनगणना आयुक्त कार्यालय.
2. दास गुप्ता, जे. (1970). भाषा संघर्ष और राष्ट्रीय विकास: भारत में समूह राजनीति और राष्ट्रीय भाषा नीति। बर्कले: यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफ़ोर्निया प्रेस।
3. अन्नामलाई, ई. (2001). भारत में मल्टीलिंगुअलिज़्म को मैनेज करना: पॉलिटिकल और लिंग्विस्टिक मैनिफेस्टेशन। नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स।
4. फिशमैन, जे. ए. (1972). भाषा का समाजशास्त्र. राउली, एमए: न्यूबरी हाउस।
5. फर्ग्यूसन, सी. ए. (1959). "डिग्लोसिया।" Word, 15(2), 325–340.
6. किंग, आर. डी. (1997). नेहरू और भारत की भाषा राजनीति। दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. ग्रियर्सन, जी. ए. (1903–1928). भारतीय भाषावैज्ञानिक सर्वेक्षण (खंड I-XI). कलकत्ता: ऑफिस ऑफ़ द सुपरिटेंडेंट ऑफ़ गवर्नमेंट प्रिंटिंग।
8. कचरू, बी. बी. (1983). अंग्रेजी का भारतीयकरण: भारत में अंग्रेजी भाषा। दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
9. मसिका, सी. पी. (1991). इंडो-आर्यन भाषाएँ। कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

10. ब्रास, पी. आर. (1974). उत्तर भारत में भाषा, धर्म और राजनीति। कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

11. हॉगेन, ई. (1966). "बोली, भाषा, राष्ट्र।" अमेरिकी मानवविज्ञानी, 68(4), 922–935.

12. सारंगी, ए. (संपादक) (2009). भारत में भाषा और राजनीति। नई दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

13. गुम्परज़, जे. जे. (1958). "एक उत्तर भारतीय गांव में बोली के अंतर और सामाजिक स्तरीकरण।" अमेरिकी मानवविज्ञानी, 60(4), 668–682.

14. तिवारी, भोलानाथ (1985). *राष्ट्रभाषा और राजभाषा.* नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन.

15. श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ (1992). *हिंदी भाषा का समाजशास्त्र.* नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन.